रास बिहारी बोस

किरण बाबल

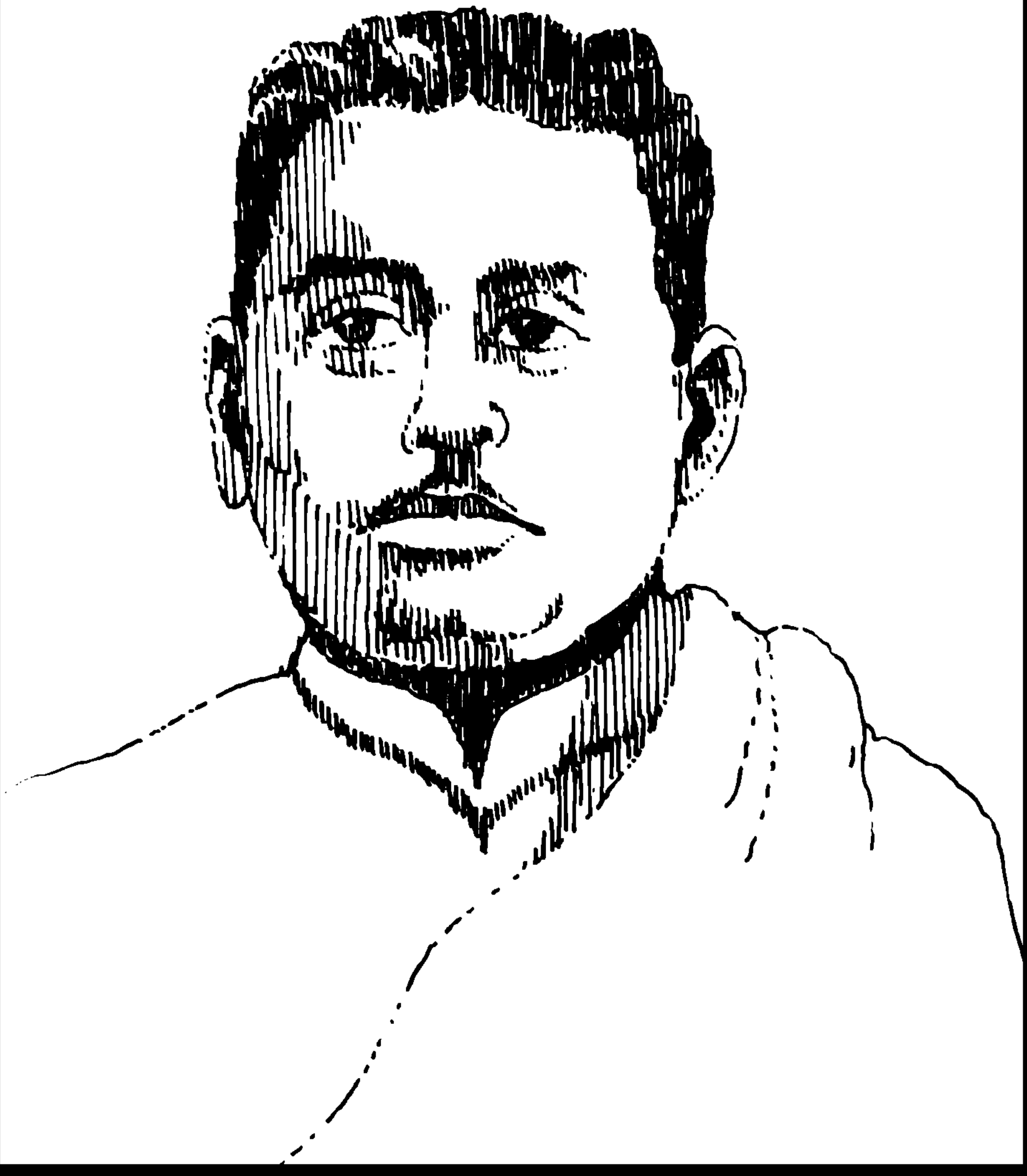

"मत भूलो कि मनुष्य के लिए गुलाम रहने से बड़ा और कोई अभिशाप नहीं है। मत भूलो कि अन्याय-उत्पीड़न से समझौता करना सबसे बड़ा पाप है। यह सनातन नियम याद रखो कि यदि तुम जीवन प्राप्त करना चाहते हो, तो पहले उसका उत्सर्ग करो। यह भी याद रखो कि अन्याय के विरुद्ध लड़ना सबसे बड़ा गुण है। फिर चाहे उसके लिए जो भी मूल्य चुकाना पड़े।"

रास बिहारी बोस
(5 जुलाई, 1943 ई.)

रास बिहारी बोस

23 दिसंबर, 1912 के दिन सुबह के समय ठंड थी। सरकारी गाड़ी में आ रहे लॉर्ड हार्डिंग के जलूस को देखने के लिए सड़क के दोनों ओर बड़ी संख्या में लोग जमा थे। इस भीड़ में कई लोग ऐसे भी थे जो हर चीज पर निगाह रखे हुए चुपचाप खड़े थे। वे एक महत्वपूर्ण कार्य से वहां आए थे। उनके चेहरे पर तनाव झलक रहा था लेकिन वे शांत खड़े थे।

दिन के करीब पौने बारह बजे जैसे ही जुलूस चांदनी चौक में धूलिया कटरा पहुंचा, जोरदार धमाके के साथ एक बम फटा। भीड़ में भगदड़ मच गई। लोग जान बचाने के लिए हड़बड़ी में भागने लगे। वाइसराय लॉर्ड हार्डिंग बच गए पर उन्हें मामूली चोट आई। परंतु हौदे के पीछे दाईं ओर की सीट पर बैठे उनके सेवक की वहीं मृत्यु हो गई। बम विस्फोट में लगभग 20 दर्शक भी जख्मी हो गए।

इस घटना के पीछे किसका हाथ था? यह अपने समय के मशहूर क्रांतिकारी रास बिहारी बोस की योजना थी।

रास बिहारी के पूर्वज बर्दवान जिले के सबलदाहा गांव में बस गए थे। उनके पिता का नाम विनोद बिहारी तथा मां का नाम भुवनेश्वरी देवी था।

रास बिहारी का जन्म 25 मई, 1886 को पालड़ा बिघटी (हुगली) गांव में हुआ। जब रास बिहारी शैशवावस्था में ही थे तभी सन् 1889 में उनकी मां चल बसीं। उनका लालन-पालन उनकी मामी वामासुंदरी ने किया। रास बिहारी 4-5 साल के थे तो उनके पिता ने दूसरा

विवाह कर लिया और उनका परिवार चंदर नगर चला गया।

रास बिहारी की प्रारंभिक शिक्षा अपने नाना कालीचरण की देखरेख में सबलदाह में और उच्च शिक्षा चंदर नगर के ड्यूप्ले कॉलेज में हुई। उन दिनों चंदर नगर पर फ्रांसीसियों का शासन था। अतः रास बिहारी का लालन-पालन ब्रिटिश तथा फ्रांसीसी संस्कृति के परिवेश में हुआ। फ्रांसीसी क्रांति (सन् 1789) का रास बिहारी जैसे युवा लोगों पर गहरा प्रभाव पड़ा। स्वतंत्रता संग्राम पर प्रारंभ से ही फ्रांसीसी क्रांति का प्रभाव था।

स्कूली जीवन में रास बिहारी पढ़ाई की ओर ज्यादा ध्यान नहीं देते थे और हमेशा कुछ सोचते रहते थे। क्रांतिपूर्ण विचारों से भरा उनका मन बहुत जिज्ञासु रहता था। पढ़ाई-लिखाई से ज्यादा उन्हें शारीरिक शक्ति की चिंता रहती थी। स्कूल में वे एक युवा क्रांतिकारी शिरीष चंद्र घोष के संपर्क में आए। दोनों में अच्छी दोस्ती हो गई। किसी तरह उन दोनों को यह विश्वास हो गया था कि यदि उन्हें काले जादू में महारत हासिल हो जाए तो वे देश को आजाद करा सकते हैं। वे दोनों रात-दिन इसी उधेड़बुन में लगे रहते। परंतु किसी झंझट में फंसने से पहले ही उनकी इस सनक का भेद खुल गया और लोगों ने उन्हें समझा-बुझाकर कोई पागलपन करने से रोक लिया।

रास बिहारी बोस एक बार अपने पिता से मिलने कलकत्ता गए। वहां जब उन्हें मालूम हुआ कि बंगालियों के फौज में भरती होने पर पाबंदी है तो उन्होंने बहुत अपमानित महसूस किया। उन्होंने छद्म नाम से फौज में भरती होने की कोशिश की। वे जल्दी ही पकड़े गए। उनकी पिटाई हुई तथा कुछ समय के लिए उन्हें हिरासत में रखा गया। आखिर उसके पिता ने उन्हें वापस चंदर नगर भेज दिया।

सौभाग्य से क्रांतिकारी विचारों से पूर्ण प्रसिद्ध पुस्तक *आनंदमठ* रास बिहारी के हाथ लग गई। यह उपन्यास जानेमाने बंगाली उपन्यासकार और चिंतक बंकिम चंद चटर्जी ने लिखा था। इन्हीं ने *वंदे मातरम्* की रचना की थी। पहले यह गीत उपन्यास में नहीं था परंतु बाद में इसे सम्मिलित कर लिया गया। *आनंदमठ* और *वंदे मातरम्* का देश के

स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। *वंदे मातरम्* से बंगाल में क्रांतिकारी आंदोलन में नया जोश आ गया। क्रांतिकारियों ने 'वंदे मातरम्' को नारे के रूप में अपना लिया। 'वंदे मातरम्' एक लंबी कविता है। इसे भारत के राष्ट्र गीत के रूप में मान्यता मिली है। *आनंदमठ* पढ़ने के बाद रास बिहारी को अनेक ग्रामीण क्रांतिकारियों के बारे में जानकारी मिली।

रास बिहारी ने प्रसिद्ध बांगला कवि नवीन सेन की देशभक्ति की कविताओं की पुस्तक *पलासीर युद्ध* (प्लासी का युद्ध) भी पढ़ी। आगे चलकर उन्होंने कई और क्रांतिकारी पुस्तकों का अध्ययन किया। उन्होंने महान राष्ट्रवादी नेता तथा उच्चकोटि के वक्ता सुरेंद्रनाथ बनर्जी के भाषण भी पढ़े।

रास बिहारी का विकास एक युवा विद्रोही के रूप में होना शुरू हुआ। चंदर नगर में अतिवादी विचारों वाले एक अध्यापक चारु चंद्र ने भी उन्हें प्रेरित किया। स्वामी विवेकानंद के व्याख्यानों ने भी रास बिहारी को राष्ट्रवादी बनने में मदद की।

नौकरी

रास बिहारी को अपनी कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने का अवसर नहीं मिला क्योंकि उनके मामा ने उन्हें फोर्ट विलियम में नौकरी दिला दी। मध्यम वर्ग के लिए नौकरी पाना ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था।

रास बिहारी के पिता शिमला में सरकारी प्रेस में नौकरी करते थे। वे रास बिहारी को भी सरकारी नौकरी दिलाना चाहते थे। अतः रास बिहारी शिमला गए और उन्हें सरकारी प्रेस में कॉपी होल्डर की नौकरी मिल गई। वहां उन्होंने अंगरेजी भाषा तथा टाइप-राइटिंग में महारत हासिल कर ली। कुछ समय बाद उन्होंने कसौली में पास्चर इंस्टिट्यूट में काम किया। वे इन नौकरियों से खुश नहीं थे। उनके मस्तिष्क में नए-नए विचार कौंधते रहते थे।

अपने एक सहकर्मी की सलाह पर रास बिहारी देहरादून में प्रमथनाथ टैगोर के घर पर गार्जियन ट्यूटर के रूप में काम करने के लिए गए। रास बिहारी के पिता ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल करते हुए उन्हें देहरादून वन अनुसंधान संस्थान में क्लर्क के पद पर नियुक्त करा दिया। धीरे-धीरे अपने परिश्रम से रास बिहारी हेडक्लर्क बन गए। सरकारी कर्मचारी होने के बावजूद उनके मन में देशभक्ति और विद्रोह की भावनाएं हिलोरें लेती रहती थीं।

ब्रिटिश शासन के अधीन देश आगे प्रगति नहीं कर रहा था। बल्कि प्रगति में बाधाएं डाली जा रही थीं। दमनकारी उपायों के कारण और अधिक क्रांतिकारियों की संख्या में और वृद्धि हो रही थी। इसके बाद की घटनाओं का रास बिहारी पर प्रत्यक्ष असर हुआ। वे अन्य क्रांतिकारियों के और निकट आ गए।

सरकार 'फूट डालो और राज करो' की नीति पर अमल कर रही थी। बंगाल के विभाजन का निर्णय इस शताब्दी के शुरू में ही गुपचुप तौर पर कर लिया गया था। सन् 1903 तक यह बात खुल चुकी थी कि बंगाल का विभाजन होने जा रहा है। इस खबर का पहले से ही पता लग जाने से सभी ओर आंदोलन होने लगे।

प्रारंभ में तो मुस्लिम नेताओं ने आंदोलन का समर्थन किया किंतु बाद में ब्रिटिश सरकार ने मुस्लिम नेता से जो ढाका का नवाब था, एक समझौता कर लिया। यह असल में राजनीतिक समझौता नहीं था। ढाका का नवाब आकंठ कर्ज में डूबा था और दिवालिया होने के कगार पर था। ब्रिटिश सरकार ने उसे कर्ज देकर उसे दिवालिया होने से बचा लिया। इसके एवज में नवाब ने अपना रुख बदल लिया और कहा कि विभाजन मुसलमानों के हित में है। इस तरह पूरे आंदोलन को सांप्रदायिक रंग दे दिया गया।

ब्रिटिश सरकार उच्च वर्ग के मुसलमानों को अपने साथ मिलाकर जनमत को विभाजित करने में कामयाब हो गई। इस सफलता से शह

पाकर तत्कालीन वाइसराय लॉर्ड कर्जन ने विजयी स्वर में घोषणा की, "बंगाल का विभाजन तय हो चुका है जिसे नकारा नहीं जा सकता।"

परंतु उस समय के बंगाल के सर्वाधिक लोकप्रिय नेता सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने कहा, "मैं इस तय मामले को अस्त व्यस्त कर दूंगा।"

लॉर्ड कर्जन ने इस पर ध्यान नहीं दिया और 16 अक्टूबर, 1905 को बंगाल के विभाजन की घोषणा कर दी। लोगों में इसकी तीखी और हिंसक प्रतिक्रिया हुई।

महाकवि रवींद्रनाथ टैगोर ने नारा दिया, "भाई-भाई एक थाई भेद नाई भेद नाई।"

यह नारा (भाई-भाई संगठित रहेंगे उनमें आपस में कोई भेद नहीं है) बंगाल में कोने-कोने में फैल गया।

'रक्षाबंधन' पर्व को नया रूप दिए जाने से इस आंदोलन को और वल उठा। सभी ने विभाजन का विरोध किया और दूसरे देशभक्तों की कलाईयों पर राखी बांधीं।

इसी आंदोलन से विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार तथा 'स्वदेशी' के इस्तेमाल के महान विचार ने जन्म लिया जो बाद में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का प्रमुख आधार बन गया। हालत यहां तक हो गई कि समूचा आंदोलन ही 'स्वदेशी आंदोलन' कहा जाने लगा।

लोगों ने विभिन्न पत्रिकाओं में लेखों के माध्यम से भी अपना विरोध और क्षोभ व्यक्त किया। स्वामी विवेकानंद के एक शिष्य संन्यासी व्रह्ममाधव उपाध्याय ने यही रास्ता अपनाया। उनका वास्तविक नाम भवानीचरण बनर्जी था। वे बंग-भंग से इतने अधिक उद्वेलित हुए कि उन्होंने अपने पत्र *संध्या* के माध्यम से देशभक्ति का प्रचार प्रारंभ कर दिया। उन्होंने कहा—"इस पृथ्वी पर कोई भी शक्ति मुझे जेल में नहीं रख सकती।" उन्होंने अपना कथन सत्य सिद्ध कर दिखाया। उनके लेखों के लिए जब उन पर मुकदमा चल रहा था तभी जेल के अस्पताल में उनकी मृत्यु हो गई।

संध्या के साथ-साथ *जुगांतर* ने भी बंगाल की जनता में उत्साह का संचार किया। इसका प्रकाशन मार्च 1906 में शुरू हुआ था। स्वामी

विवेकानंद के छोटे भाई भूपेंद्रनाथ दत्त ने यह पत्र निकाला था।

उसी वर्ष अगस्त में अरविंद घोष ने *वंदे मातरम्* का प्रकाशन शुरू कर दिया। भारतवासियों के नाम उनके इस संदेश से कि "हम ब्रिटिश शासन से मुक्त पूर्ण स्वायत्तता चाहते है,"–लोग राष्ट्रवादी भावनाओं से अनुप्राणित हो उठे।

गुप्त संस्थाएं

बंगाल में व्याप्त इसी हलचल से खुदीराम बोस जैसे क्रांतिकारी उभरे। अलीपुर कांड के मुकदमे ने राजनीतिक जोश पैदा किया था।

अब, अरविंद घोष और उनके भाई बारींद्र कुमार घोष भी खुलकर सामने आ गए। अरविंद इंग्लैंड में आई.सी.एस. की परीक्षा में बैठे थे और उनके परचे बहुत अच्छे हुए थे। परंतु वे घुड़सवारी में फेल हो गए। इंग्लैंड से लौटकर अरविंद बड़ौदा में प्रोफेसर के रूप में काम करने लगे। बारींद्र को बंगाल में गुप्त क्रांतिकारी संस्थाएं बनाने का काम सौंपा गया।

खुदीराम ऐसी ही एक संस्था के सदस्य थे। चीफ प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट किंग्सफोर्ड अपनी क्रूरता के लिए कुख्यात हो गया था। उसने अपने अधिकारों से बाहर जाकर अनेक क्रांतिकारियों को सख्त सजाएं दीं। केवल 'वंदे मातरम्' का नारा लगाने पर ही कुछ लोगों को उसने कोड़े लगवाए थे।

क्रांतिकारी, किंग्सफोर्ड को मार डालना चाहते थे। पुलिस को इस योजना का पता चल गया। मजिस्ट्रेट का किसी दूर के स्थान पर तबादला कर दिया गया। बारींद्र कुमार ने मजिस्ट्रेट पर बम फेंकने के लिए खुदीराम तथा कुछ और युवकों को भेजा। खुदीराम ने उसकी गाड़ी पहचान ली परंतु उस दिन उसमें मजिस्ट्रेट के बजाय कुछ महिलाएं जा रही थीं। बम फटने से वे महिलाएं मारी गई। अलीपुर कांड के नाम से मशहूर हुए इस मामले में अरविंद घोष, बारींद्र कुमार तथा खुदीराम गिरफ्तार कर लिए गए। खुदीराम को फांसी की सजा

हुई। 11 अगस्त, 1908 को खुदीराम को फांसी दे दी गई। उन्होंने बहादुरी के साथ फांसी का फंदा चूमा। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का इस घटना पर ध्यान गया और उन्होंने अपने पत्र *केसरी* में लेख लिखे जिनमें खुदीराम की तारीफ की गई। खुदीराम की फांसी की खबर आग की तरह फैल गई और पूरे बंगाल में खुदीराम का नाम लोगों की जबान पर आ गया। खुदीराम के बारे में लेख लिखने के लिए तिलक को जेल में डाल दिया गया।

इन सब घटनाओं का रास बिहारी पर गहरा असर हुआ। वास्तव में लोकमान्य तिलक उन लोगों में से थे जिन्होंने उन्हें प्रभावित किया, उनकी मनोवृत्ति को राष्ट्रीयता के सांचे में ढालकर स्वतंत्रता संग्राम के मार्ग पर चलने को प्रेरित किया।

महत्वपूर्ण मोड़

खुदीराम की घटना ने रासबिहारी के जीवन का रुख ही मोड़ दिया। धीरे-धीरे उन्हें यह साफ महसूस होने लगा कि देशभक्तों द्वारा क्रांति का सहारा लिए बिना सरकार झुकने वाली नहीं है। उन्होंने लोगों में देशभक्ति के भाव जगाने के उद्देश्य से खुदीराम की तरह कुछ करने का निश्चय किया। उन्होंने प्रमुख क्रांतिकारी नेता जतिन बनर्जी की देखरेख में अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों की तैयारी शुरू की।

भारत के युवकों में असंतोष बढ़ता जा रहा था। वे गुप्त संस्थाएं बनाने लगे। परंतु अक्सर इन संस्थाओं को अपना 'करणीय' स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं होता था। उन्हें मोटे तौर पर केवल यही मालूम था कि अंगरेजों को देश से बाहर निकालना है। कई तरह के स्थानीय संगठन अस्तित्व में आ गए और युवक उनमें शामिल हो गए। कुछ युवकों को मास्टर अमीरचंद, अवध बिहारी और बाल मुंकुद जैसे विख्यात क्रांतिकारी नेताओं से प्रशिक्षण लेने के लिए दिल्ली भेजा गया।

रास बिहारी ने बनारस को अपना मुख्यालय बनाया। समूचे उत्तर भारत में विद्रोह की योजना में सैनिकों को शामिल करने के इरादे से

उनके बीच प्रचार करने का काम हाथ में लिया गया। दीनापुर से जालंधर छावनियों तक के सैनिकों के साथ संपर्क किया गया। यह योजना बनी कि एक निश्चित तारीख को भारतीय सैनिक रात के समय अंगरेज सैनिकों पर हमला करेंगे। उसी समय तार की लाइनें काटी जाएंगी, खजाने लूटे जाएंगे तथा कैदियों को रिहा किया जाएगा। क्रांतिकारियों को यह सब सब करने के बाद लाहौर में मिलना था। पूरे भारत में एक साथ विद्रोह की इस कार्रवाई के लिए 21 फरवरी, 1915 की तारीख तय की गई।

परंतु एक जासूस किरपाल सिंह ने, जो रास बिहारी की पार्टी का सदस्य बन गया था, पुलिस को इस तारीख की खबर कर दी। इस बात का पता चलते ही तारीख बदलकर 19 फरवरी कर दी गई। किरपाल सिंह पर कड़ी चौकसी रखी जा रही थी, परंतु उसने तारीख बदलने की खबर भी पुलिस को दे दी। सरकार ने तत्काल कई संदिग्ध ठिकानों पर छापे मारे और कुछ लोगों को गिरफ्तार भी किया। रास बिहारी निकल भागने में सफल हो गए और सुरक्षित बनारस पहुंच गए।

ब्रिटिश सरकार ने अपनी राजधानी कलकत्ता से दिल्ली ले जाने का फैसला किया। रास बिहारी को यह खबर मिली तो वे बहुत खुश हुए। उन्हें लगा कि यही मौका है जब अंगरेजों पर प्रहार करके उन्हें यह जताया जा सकता है कि भारतवासी दबने वाले नहीं हैं और वे तब तक शांत नहीं बैठेंगे जब तक उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता नहीं मिल जाती। रास बिहारी ने दिल्ली के कुछ क्रांतिकारियों के साथ मिलकर वाइसराय की यात्रा के दौरान कुछ जबरदस्त कर दिखाने का फैसला किया जिसका जिक्र शुरू में किया जा चुका है।

षड्यंत्र के मुकदमे

सन् 1913 में सरकार ने इंडियन क्रिमिनल लॉ अमेंडमेंट एक्ट (भारतीय फौजदारी कानून संशोधन अधिनियम) पारित किया। इस कानून के अंतर्गत चलाए जाने वाले षड्यंत्र के मुकदमों में सबसे

महत्वपूर्ण दिल्ली षड्यंत्र का मामला था। लॉर्ड हार्डिंग की हत्या की योजना के अपराध में अनेक लोगों पर मुकदमे चलाए गए। मुख्य अभियुक्त थे—मास्टर अमीरचंद, अवध बिहारी, बालमुकुंद तथा बसंत विश्वास।

मास्टर अमीरचंद, अवध बिहारी और बालमुकुंद को दिल्ली जेल में फांसी दी गई। इस पुरानी जेल के स्थान पर अब मौलाना आजाद मेडिकल कालेज बना हुआ है। जेल के जिस हिस्से में फांसी दी गई थी उसे अलग रखा गया है और हर साल मई में वहां शहीदों को श्रद्धांजलि दी जाती है।

बसंत विश्वास को अंबाला जेल में फांसी दी गई। असल में उन्होंने ही एक औरत का भेस बनाकर बम फेंका था। रास बिहारी ने दक्षता से भेस बदला था इसलिए वे पकड़ में नहीं आए और बच निकले।

सर वेलेंटाउन चिरॉल ने अपनी पुस्तक *इंडियन अनरेस्ट* में इस घटना के बारे में लिखा है, "नई राजधानी दिल्ली में वाइसराय की शाही सवारी पर बम फेंकने की घटना से क्रांतिकारी उथल-पुथल पर जबरदस्त असर पड़ा जिसने देश को हिलाकर रख दिया। रास बिहारी ने बम विस्फोट का जो सिलसिला शुरू किया, वह कभी नहीं रुका। उन्होंने ही दूसरे सैनिक विद्रोह की योजना बनाई, जो यदि सफल हो जाती तो उससे भारत में ब्रिटिश साम्राज्य छिन्न भिन्न हो जाता।"

एक प्रसिद्ध लेखिका वसुधा चक्रवर्ती ने लिखा, "रास बिहारी को इस प्रकार सोचने और कार्रवाई करने की प्रेरणा किसने दी? असल में इतिहास की प्रेरक शक्ति चुपचाप अपना काम कर रही थी। इस शताब्दी की शुरूआत में शुरू हुआ स्वतंत्रता संग्राम अब देश की तात्कालिक आवश्यकता बन गया था। ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर दिल्ली की सड़कों से किया गया यह हमला भले ही दब गया परंतु बम ने इतिहास के सिंहद्वार को गुंजायमान कर दिया।"

रास बिहारी की जोरदार तलाश की गई, परंतु वे हमेशा की तरह बच निकले। वे भेस बदलने में निपुण थे। जिस शहर में वे रहते वहां उनके छिपने के कम से कम चार ठिकाने होते थे। उनके साथियों

को भी पता नहीं होता था कि उन्होंने रातें कहां बिताईं।

क्रांतिकारियों के मामले देखने वाले प्रसिद्ध पुलिस अधिकारी सर चार्ल्स ने लिखा, "रास बिहारी भेस बदलने में इतने उस्ताद थे कि वे पंजाबी, गुजराती या महाराष्ट्र के वृद्ध व्यक्ति की तरह ऐसा भेस बनाते थे कि कोई भी यह नहीं सोच सकता था कि उन्होंने भेस बदल रखा है। यदि वे चाहते तो क्रांतिकारी के बजाय बढ़िया अभिनेता बन सकते थे।"

सरकार द्वारा सरगर्मी से होनेवाली अपनी तलाश के कारण रासबिहारी कभी एक जगह पर टिक नहीं सके। वे भेस बदलकर पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा बंगाल में यात्रा करते।

पहला विश्व युद्ध शुरू हो चुका था और क्रांतिकारियों ने भारत में विद्रोह का बिगुल बजाने के लिए जरमनी की मदद पाने का इंतजाम किया। 20वीं शती के पहले दशक में सैकड़ों भारतीय बेहतर आजीविका के लिए अमेरिका तथा अन्य देशों में गए। भारत से रवाना होते समय उनके विचार क्रांतिकारी नहीं थे। कुछ ही वर्षों में ये साधारण व्यक्ति अमीर हो गए लेकिन उन्हें महसूस होने लगा कि हालांकि वे उन देशों के लोगों से भी अधिक मेहनत कर रहे थे, परंतु उन्हें समुचित सम्मान नहीं मिलता था, क्योंकि वे ऐसे देश से आए थे जो विदेशी शासन के अधीन था। इस प्रकार उनके दृष्टिकोणों में बदलाव आया।

लाला हरदयाल– प्रोफेसर बर्कतुल्ला, तारकनाथ दास जैसे प्रतिष्ठित विद्वानों ने भारत से बाहर बसे भारतीयों में देशभक्ति के बीज बोना शुरू कर दिया। इस प्रकार सन् 1913 में अमेरिका में गदर पार्टी का जन्म हुआ। बाद में इस पार्टी के बहुत से सदस्य महान देशभक्त के रूप में विख्यात हुए। गदर पार्टी के करीब 8,000 सदस्य खुले आम या फिर चोरी छिपे क्रांति लाने के उद्देश्य से भारत आए।

रास बिहारी तथा उनके एक अंतरंग साथी व क्रांतिकारी सचिन सान्याल इस संस्था के संपर्क में आए। एक महाराष्ट्रीय युवक पिंगले सत्येन सेन के साथ जरमनी से सहायता मिलने संबंधी खबर लेकर कलकत्ता पहुंचा। पिंगले को बनारस में रास बिहारी के साथ काम

करना था। रास बिहारी, पिंगले तथा गदर पार्टी सशस्त्र विद्रोह की दिशा में काम कर रहे थे। सचिन सान्याल भी उनके साथ जुड़ गए।

सचिन सान्याल, रास बिहारी के दाएं हाथ थे। उनका कार्यक्षेत्र बनारस था। बाद में सचिन सान्याल गिरफ्तार हो गए और बनारस षड्यंत्र के मामले में उन्हें आजीवन कालेपानी की सजा हुई। अंडमान से रिहा होने के पश्चात् वे अपने पुराने स्थान पर लौट आए। कुछ समय तक वे शांत रहे क्योंकि सन् 1921 में गांधीजी ने असहयोग आंदोलन प्रारंभ कर दिया था। परंतु असहयोग आंदोलन के बाद क्रांतिकारी एक बार फिर मैदान में उतरे और सचिन सान्याल क्रांतिकारियों के महान नेता के रूप में सामने आए। उन्होंने हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन बनाया, जिसका बाद में भगत सिंह हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन कर के रूप में पुनः नामकरण दिया।

युगांतर पार्टी के नेता जतिन मुखर्जी ने रास बिहारी से उत्तर प्रदेश और पंजाब में क्रांतिकारी आंदोलन को सक्रिय करने का आग्रह किया। इस दौरान रास बिहारी लाहौर, अमृतसर तथा बनारस में पुलिस की निगाहों से कई बार बाल-बाल बचे थे।

मार्च 1915 में पिंगले कुछ बम ले जाते हुए मेरठ छावनी में गिरफ्तार हो गया और उसे फांसी दे दी गई। तभी रास बिहारी ने भारत से निकलकर जापान पहुंचने का फैसला किया। वे बनारस पहुंचे और *संध्या* के स्वामी विद्यानंद के साथ एक मठ में रहे। उनके पुराने दोस्त ही उनके मुख्य समर्थक थे।

जापान में

12 मई, 1915 को रास बिहारी कलकत्ता से रवाना हुए। रवींद्रनाथ टैगोर के दूर के रिश्तेदार राजा पी.एन.टी. टैगोर को जल्दी ही जापान जाना था रास बिहारी इन्हीं के रूप में जापान चले गए। वे पुलिस को यह विश्वास दिलाने में सफल हो गए कि वे रवींद्रनाथ टैगोर की यात्रा का इंतजाम करने जापान जा रहे हैं।

कुछ लेखकों का मानना है कि रवींद्रनाथ टैगोर को रास बिहारी के छद्म रूप की जानकारी थी क्योंकि जब वे दूसरी बार जापान गए तो रास बिहारी ने टैगोर की यात्रा को सफल बनाने का भरसक प्रयास किया। इस बीच रास बिहारी जापान में बहुत बड़ी हस्ती बन चुके थे। उनके लेखों ने उन्हें भारतीय पुनर्जागरण के प्रतिनिधि के तौर पर स्थापित कर दिया था।

रास बिहारी 22 मई 1915 को सिंगापुर पहुंचे और वहां से जून में टोकियो पहुंचे। जून 1915 से जून 1918 तक वे जापान में यहां से वहां भागते रहे। जापान के मान्यता प्राप्त नागरिक बनने तक संघर्षशील क्रांतिकारी के रूप में उन्हें 17 बार अपना घर बदलना पड़ा। इस दौरान उनकी मुलाकात गदर पार्टी के हेरंबलाल गुप्ता तथा भगवान सिंह से हुई। युद्ध में जापान, ब्रिटेन का मित्र देश था अतः ब्रिटेन ने कोशिश की कि हेरंबलाल तथा रास बिहारी को वहां से वापस लौटाए।

लॉर्ड हार्डिंग ने अपनी एक रिपोर्ट में लिखा, उनमें से सबसे खतरनाक रास बिहारी बोस है जो बचकर जापान चला गया है। ब्रिटिश सरकार को जापान सरकार के विदेश मंत्रालय पर दबाव डालना चाहिए कि सेना में सशस्त्र विद्रोह फैलाने की योजना बनाने वाले भारतीय साम्राज्य के इस घोर शत्रु को प्रत्यर्पित करके हमे सौंपा जाए।"

ब्रिटिश सरकार का दबाव बढ़ने लगा। हेरंबलाल और रास बिहारी को जापान छोड़ने के आदेश दे दिए गए। परंतु जापान की ब्लैक ड्रेगन पार्टी ने उनका बचाव किया और उन्हें संरक्षण प्रदान किया। वे जापान में ही छिपे रहे। हेरंबलाल भारी जोखिम उठाकर मेक्सिको के एक जहाज में अमेरिका चले गए। रास बिहारी जापानी नागरिक बन गए और उनका लुका-छिपी का सिलसिला खत्म हो गया। श्री सोमा तथा श्रीमती सोमा के परिवार को भारत के प्रति उनकी आकांक्षाओं के लिए सहानुभूति थी। उन्होंने अपनी बेटी तोसिको को इस भारतीय देशभक्त से विवाह करने के लिए राजी किया। सन् 1918 में रास बिहारी ने तोसिको से विवाह कर लिया।

विवाह के बाद रास बिहारी तथा तोसिको का जीवन कष्टमय रहा।

उन्हें कई तकलीफों से गुजरना पड़ा। तोसिको ने एक पुत्र, मसाहिदी तथा एक पुत्री तेताकु को जन्म दिया। रास बिहारी ने जापानी भाषा सीखी तथा वे जापानी भाषा के पत्रकार और लेखक बन गए। वे जापान की सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेते रहे तथा भारतीय दृष्टिकोण को समझाते हुए उन्होंने जापानी भाषा में कई पुस्तकें लिखीं।

मार्च 1925 में 28 वर्ष की आयु में तोसिको का निधन हो गया। बच्चों का लालन पालन नाना-नानी ने किया।

रास बिहारी ने 27 जनवरी 1934 को अपनी बहन सुशीला को भेजे अपने पत्र में लिखा,..."मुझे खुशी है कि तुम्हें पैसे मिल गए। मेरी माली हालत बहुत अच्छी नहीं है इसलिए मैं ज्यादा पैसे नहीं भेज पाया...यह जानकर दुख हुआ कि माशी मां का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। उनके बारे में लिखना और उन्हें मेरा प्रणाम कहना। उनकी देखभाल करते रहना और चरखा कातना मत छोड़ना..."

रास बिहारी ने अपनी हर सांस मातृभूमि को अंगरेजों से मुक्त कराने के प्रयास किए। क्रांतिकारी के रूप में रास बिहारी चरखा कातने के पक्ष में नहीं थे, परंतु उन्होंने अपनी बहन से चरखा कातना जारी रखने को कहा।

रास बिहारी काम से कभी विमुख नहीं हुए। मुख्य रूप से उनके ही प्रयासों से राजनीतिक विषयों पर चर्चा के लिए टोकियो में 28 से 30 मार्च, 1942 तक एक सम्मेलन का आयोजन हुआ। इसके बाद बैंकाक में 15 से 23 जून, 1942 को हुए सम्मेलन में रास बिहारी को अध्यक्ष चुना गया। उन्होंने तिरंगा झंडा फहराया और इंडियन इंडिपेंडेंस लीग का उद्घाटन किया। इसका उद्देश्य भारत को पूर्ण स्वतंत्रता दिलाना था।

आजाद हिंद फौज

दूसरे विश्वयुद्ध में रास बिहारी को काफी राजनीतिक ख्याति मिली। जब जापान ने युद्ध की घोषणा की तो जापान द्वारा जीते गए

पूर्व एशिया के विस्तृत भू-भाग का दौरा करते हुए रास बिहारी ने कैप्टेन मोहन सिंह तथा सरदार प्रीतम सिंह की मदद से आजाद हिंद फौज की स्थापना की।

1 सितंबर, 1942 को आजाद हिंद फौज का विधिवत् गठन हुआ। रास बिहारी उसके अध्यक्ष चुने गए। जापान की विजय पताका बर्मा (म्यांमार) तक फहराने लगी तो आजाद हिंद फौज का महत्व बढ़ गया, क्योंकि युद्धबंदियों को रंगरूटों के रूप में भरती कर लिया गया।

दुर्भाग्यवश आंतरिक झगड़ों के कारण इसकी प्रगति में बाधा पड़ गई और कुछ समय के लिए यह निष्क्रिय हो गई।

2 जुलाई, 1943 को सुभाषचंद्र बोस सिंगापुर पहुंच गए और फिर 25 अगस्त को उन्होंने आजाद हिंद फौज की सर्वोच्च कमान संभाल ली।

सुभाषचंद्र बोस महान् भारतीय नेता थे। आजादी के लिए संघर्ष कर रही क्रांतिकारी पार्टियों के प्रति उनके मन में सराहना और सहानुभूति का भाव था। वे कांग्रेस के प्रमुख नेता थे। सन् 1938 में वे हरिपुरा में कांग्रेस के अध्यक्ष बने। परंतु जल्दी ही गांधीजी और सुभाषचंद्र बोस में मतभेद पैदा हो गए। गांधीजी के विरोध के बावजूद सुभाष चंद्र बोस ने कांग्रेस के अध्यक्ष पद के दूसरे कार्यकाल के लिए चुनाव लड़ा। चुनाव में वे विजयी रहे और सन् 1939 में कांग्रेस के त्रिपुरी अधिवेशन की उन्होंने अध्यक्षता की। गांधीजी, सुभाषचंद्र बोस के दूसरी बार अध्यक्ष बनने के पक्ष में नहीं थे। हालात ऐसे बने कि उन्हें अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना पड़ा। उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी और फॉरवर्ड ब्लॉक का गठन किया।

कुछ समय तक राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रहने के बाद सुभाष चंद्र बोस जनवरी 1941 में गुप्त रूप से भारत से बाहर चले गए।

जिस समय आजाद हिंद फौज आंतरिक संकट के दौर से गुजर रही थी उस समय सुभाष चंद्र बोस को अपने पास पाकर रास बिहारी को बहुत राहत महसूस हुई।

21 जनवरी 1945 को युद्ध समाप्त होने से पहले जब जापान की स्थिति कमजोर हो रही थी तभी रासबिहारी बोस का सोते हुए ही स्वर्गवास हो गया। सुभाषचंद्र बोस ने उनकी देशभक्ति और उनके क्रांतिकारी कार्यों की सराहना करते हुए उन्हें श्रद्धांजलि दी।

रासबिहारी का जीवन काल तीन भागों में बांटा जा सकता है। उनके जीवन के प्रथम 20 वर्ष अर्थात् सन् 1886 से सन् 1906 तक बंगाल में बीते। बचकर जापान जाने तक, सन् 1907 से सन् 1915 तक का समय उत्तर भारत में बीता। सन् 1915 में वे जापान चले गए और उसके बाद मृत्युपर्यंत जापान में रहे।

रासबिहारी प्रबल व्यक्तित्व के धनी थे। वे राष्ट्रवादी थे परंतु अंतरराष्ट्रीय सहयोग के हामी थे जैसा कि दोनों विश्व युद्धों में दिखाई भी दिया। सामाजिक मामलों में वे उदारवादी थे। भारत में उन्होंने अत्यंत सादा गैर-परंपरागत ढंग से जीवन बिताया। उनका स्वभाव भी काफी शांत रहा।

भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन में उनकी भूमिका बेजोड़ रही। उनका राजनीतिक जीवन चंदर नगर तथा कलकत्ता से प्रारंभ हुआ। देहरादून तथा पंजाब में रहते हुए उन्होंने स्थानीय लोगों का विश्वास जीतकर उनके साथ काम किया। वे क्षेत्रवाद से ऊपर थे। उन्होंने अपनी शानदार संगठन क्षमता का परिचय लॉर्ड हार्डिंग बम कांड तथा दूसरे विश्व युद्ध के दौरान आजाद हिंद फौज की स्थापना में दिया।। वे भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन के महान नायक के रूप में हमेशा याद किए जाते रहेंगे।

"मैं भारतीय जनता का आह्वान करता हूं कि वह अपने जन्मसिद्ध अधिकारों और स्वराज की प्राप्ति के लिए निरंतर आगे बढ़े। जिससे भारत एक बार फिर अपनी सभ्यता एवं संस्कृति के बल पर विश्व के महानतम देशों में गिना जाए।"

दादा भाई नौरोजी
(कलकत्ता में सम्मेलन में दिए गए भाषण का अंश)